

ओ३म्

ब्रह्मचर्य गौरव

भाग - 1



आचार्य ब्र० नन्दकिशोर

॥ ओ३म् ॥

ब्रह्मचर्य गौरव

लेखक :-

आचार्य ब्र० नन्दकिशोर

सम्पादक :-

आचार्य सत्यसिन्धु

प्रकाशक :

वैदिक साहित्य प्रतिष्ठान

सहयोग राशि—रामदेव धींगड़ा पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट, पानीपत

-
- प्रकाशक** : वैदिक साहित्य प्रतिष्ठान
गणेशदास गरिमा गोयल, २७०४, प्रेममणि- निवास,
नया बाजार दिल्ली-६
चलभाष : ०९८९९७५९००२
- संस्करण** : सन् २०१३
- मूल्य** : १०.०० रुपये
- प्राप्ति-स्थान** : १. माता तुलसा देवी, हुकुमचन्द्र धर्मार्थ आर्य साहित्य
प्रकाशन, लाला लाजपत राय चौक, आर्यसमाज,
नागोरी गेट, हिंसार (हरि०)
२. आनन्द मुनि,
चलभाष : ०९०३४४४४८९८
३. आर्ष गुरुकुल, नर्मदापुरम्, जिला-होशंगाबाद
(म०प्र०)
४. आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय, झज्जर, जिला-झज्जर
(हरि०)
- लेजर टाईपसेटिंग** : आर्य लेजर प्रिंटर्स, हिण्डौन सिटी, राजस्थान
- मुद्रक** : अजय प्रिंटर्स, दिल्ली-110032



महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती

सत्यार्थप्रकाश के लेखक

(विक्रमसंवत् १८८१-१९४०)

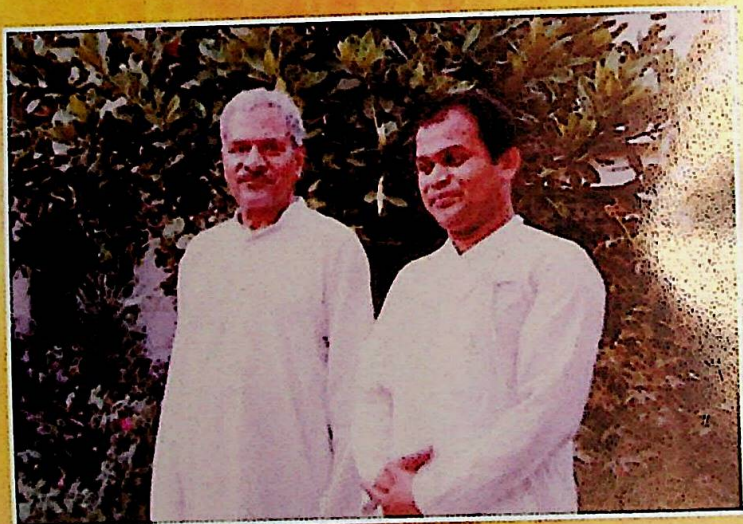
समर्पण

आर्यावर्त की धरती पर अठासी हजार उर्ध्वरेता ऋषि नैष्ठिक ब्रह्मचारी हो चुके हैं इस ब्रह्मचर्य की परम्परा का अनुशरण आर्य-समाज के संस्थापक युगद्रष्टा महर्षि दयानन्द ने पालन किया। ऋषि के पश्चात् ब्रह्मचारी नित्यानन्द, स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी, स्वामी आत्मानन्दजी सरस्वती, स्वामी वेदानन्द तीर्थ, स्वामी स्वतन्त्रतानन्दजी, स्वामी सर्वानन्द सरस्वती, ब्रह्मचारी अखिलानन्दजी झरिया बिहार समस्त गुरुकुलों के आचार्य जो नैष्ठिक ब्रह्मचारी हैं, उन्हीं आचार्य के चरणों में यह लघुपुस्तिका ब्रह्मचर्य गौरव सादर समर्पित है।

—आचार्य ब्र० नन्दकिशोर



आचार्य ब्र० नन्दकिशोर



आचार्य रामनाथ वेदालंकार के साथ ब्र० नन्दकिशोर
वेद मन्दिर, ज्वालापुर (हरिद्वार)

प्राक्कथन

सृष्टि के प्रारम्भ काल से ही आज पर्यन्त तक ब्रह्मचर्य का महत्त्व रहा है। मेरा मानना है कि इस संसार में ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यस्थ आश्रम चारों का सन्तुलन समकक्ष है। इन चारों आश्रमों में ब्रह्मचर्य अनिवार्य है। ब्रह्मचर्य के बिना चक्रवर्ती राज्य प्राप्त नहीं किया जा सकता और न ही राज्य को चला सकते हैं। आर्यावर्त देश में अठासी हजार ऋषि-महर्षि, उर्ध्वरेता, नैष्ठिक, ब्रह्मचारी हो चुके हैं, रामायणकाल में वीर हनुमान् ब्रह्मचारी थे, महाभारत काल में भीष्म पितामह ब्रह्मचारी थे, आज के युग में महर्षि दयानन्द सरस्वती ब्रह्मचारी रहे हैं। महर्षि दयानन्द द्वारा स्थापित आर्यसमाज के गुरुकुलों से हजारों ब्रह्मचारी हुए हैं, जो देश का अच्छा नेतृत्व देकर मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं। ब्रह्मचर्य का महत्त्वपूर्ण शिक्षण आर्यसमाज की शिक्षण संस्थाओं में ही प्रशिक्षण दिया जाता है, उदाहरण के रूप में गुरुकुल, कन्या गुरुकुल, आर्यवीर दल बहुत कार्य कर रहे हैं। अथर्ववेद के मन्त्रों में राजा को ब्रह्मचारी कहा है। शिक्षा के क्षेत्र में आचार्य को ब्रह्मचारी दर्शाया है। आचार्य ब्रह्मचारी होने के कारण ब्रह्मचारी को चाहता है। राजा और आचार्य राष्ट्र निर्माता और भाग्य विधाता है। राजा प्रजा पर शासन करता है, आचार्य ब्रह्मचारी को ज्ञान प्रदान करता है। हमारे भारतवर्ष देश में राष्ट्रपति एवं प्रधानमन्त्री ब्रह्मचारी होकर शासन किये हैं। आज भी महिलाएँ पश्चिम बंगाल, तमिलनाडू, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश में मुख्यमन्त्री बनकर राज्य को चला रही हैं, ये सब ब्रह्मचर्य का कमाल है।

महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज के कारण मत-मतान्तरों में भी बहुत से वर्ग ब्रह्मचारी होने लगे हैं। ब्रह्मचर्य के बल पर देश और विभिन्न विभागों में लोग सेवारत हैं। ब्रह्मचर्य का आनन्द कुछ और ही है, रहकर देखो, पता चलेगा। सदैव स्वस्थ रहोगे, ब्रह्मचर्य के मतवाला को सब कुछ, ब्रह्मचर्य, ब्रह्मचर्य, ब्रह्मचर्य ही दिखाई देता है। जलचर, नभचर में सर्वत्र ब्रह्मचर्य दिखाई देता है

उसके सामने पक्षी भी ब्रह्मचारी है, घास खाने वाला बैल सांड भी ब्रह्मचारी है, समस्त वैदिक साहित्य ब्रह्मचर्य के गुणगान से भरा पड़ा है। १९८५ से ही ब्रह्मचर्य पर पुस्तक लिखना चाहता था। दो-दो पृष्ठ लिखकर वेद मन्दिर ज्वालापुर एवं गुरुकुल होशंगाबाद के पुस्तकालय में लिखकर छोड़ देता था। भारतवर्ष के विभिन्न प्रान्तों में वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार में व्यस्तता के कारण ब्रह्मचर्य पर पुस्तक न लिख पाया। इस बार ब्रह्मचर्य गौरव पुस्तक लिखकर मेरी इच्छा पूर्ण हुई। इस पुस्तक को सुचारु रूप से तैयार करने में विभिन्न पुस्तकें सहायक रही, ऋग्वेद, अथर्ववेद, यजुर्वेद, कठोपनिषद्, छान्दोग्योपनिषद्, आरोग्यप्रकाश, सत्यार्थ-प्रकाश, संस्कार विधि, पुरुषार्थप्रकाश, ब्रह्मचर्य के साधन, ब्रह्मचर्य विज्ञान, बाल जीवन सोपान, वैदिक ब्रह्मचर्य गीत, वैदिक उपदेश माला, उपनयन सर्वस्व, सौ वर्ष जीने की कला, वैदिक वीर गर्जना, अष्टाङ्ग हृदय, ब्रह्मचर्य सन्देश, आध्यात्मिक पथ, स्त्रियों का वेदाध्ययन अधिकार, वेद स्वाध्याय इत्यादि। मैं उपकृत हूँ मेरे निवासी आर्यमुनि का जिन्होंने प्रूफ संशोधन में सहयोग किये हैं। गुरुकुल के ब्रह्मचारी स्कूल के छात्रों के लिये यह रोचक प्रेरणा देने वाली, लाभकारी पुस्तक बनाई गयी है, आशा है यह ब्रह्मचर्य गौरव पुस्तक आप के जीवन को ऊँचा उठायेगी, संजीवनी का कार्य करेगी।

मंगल कामनाओं के साथ

—आचार्य ब्र० नन्दकिशोर

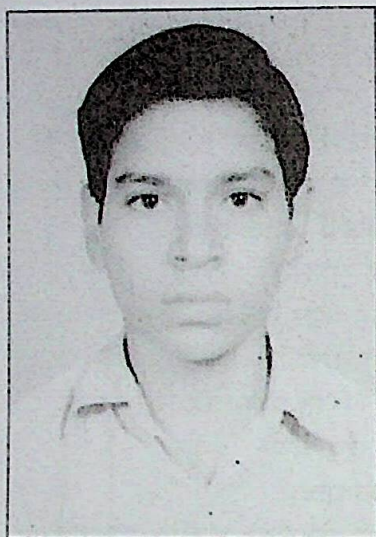
कल्पतरु आश्रम, नेपाली फार्म

पो०-सत्यनारायण मन्दिर

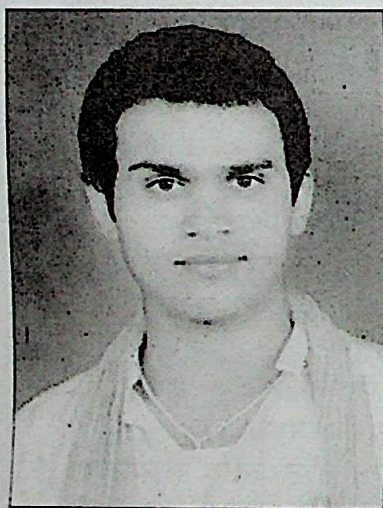
जि०-देहरादून उत्तराखण्ड (भारत)

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
१. प्राक्कथन	६
२. अथ ब्रह्मचर्यं जिज्ञासा	९
३. ब्रह्मचर्य जीवन संजीवन बूटी	९
४. वैदिक ब्रह्मचर्य स्तवन	१०
५. ब्रह्मचर्य की महिमा	१२
६. पञ्चभूतों का सार	१४
७. शील और ब्रह्मचर्य	१६
८. महर्षि द्वारा रचित संस्कार विधि...	१७
९. कन्या और ब्रह्मचर्य	२०
१०. आयु और ब्रह्मचर्य	२१
११. ब्रह्मचर्य और वेदवेता महर्षि भरद्वाज	२२
१२. वेदवेता नारदमुनि और ब्रह्मचर्यव्रती सनत्कुमार	२३
१३. ब्रह्मचर्य और ब्रह्मवादिनी सुलभा	२३
१४. उध्वरता और नैष्ठिक ब्रह्मचारी	२४
१५. स्त्री ब्रह्मा है	२४
१६. विद्या और ब्रह्मचर्य	२५
१७. ब्रह्मचर्य और राजा	२५
१८. ब्रह्मचर्य का प्रभाव	२८
१९. पुत्र और योगिराज श्री कृष्ण	२८
२०. श्री राम भ्राता लक्ष्मण और ब्रह्मचर्य	२९
२१. ब्रह्मचर्य के बाधक का कारण	३०
२२. अष्टविध मैथुन	३०
२३. शिष्य-गुरु संवाद	३१
२४. छायाचित्र पर आसक्त	३२
२५. आर्ष गुरुकुल होशंगाबाद मध्यप्रदेश की घटना	३३
२६. पञ्च विकार से मृत्यु	३५
२७. पं० अमृतलाल शर्मा एवं श्री सूरदासजी	३७
२८. ब्रह्मचर्य का ढोंग	३८
२९. कवित और गीत	३९



ब्र० हसंराज आर्य



ब्र० नन्दकिशोर

अथ ब्रह्मचर्यं जिज्ञासा

१. ब्रह्म एव हतो हन्ति ब्रह्मो रक्षति रक्षितः ।
तस्माद्ब्रह्मो न हन्तव्यो मा नो ब्रह्मो हतोऽवधीत् ॥

अर्थ—हमने ब्रह्म-वेद-ब्रह्मचर्य को नष्ट कर दिया तो ब्रह्म अर्थात् ब्रह्मचर्य भी हमें नष्ट कर देगा। और यदि हम ब्रह्म की अर्थात् ब्रह्मचर्य का पालन करेंगे तो वह भी हमारी रक्षा करेगा। अतः ब्रह्मचर्य की रक्षा अपने प्राणों से बढ़कर करनी चाहिये।

ब्रह्मचर्यं जीवन संजीवन बूटी

२. हन्ताहं पृथिवीमिमां निदधानीह वेह वा ।
कुवित्सोमस्यापामिति ॥

—ऋ० १०।११९।९

प्रश्न (१)—अरे भाई ब्रह्मचारी ! क्या बात है कि तुम ठहाका मारकर हँस रहे हो ?

उत्तर—मत पूछो मेरी मस्ती का ठिकाना—यदि सुनना ही चाहते हो तो सुनो ! मैंने “ब्रह्मचर्य संजीवन बूटी” सोमरस का पान कर लिया इसलिए जी चाहता है कि इस पृथ्वी को उठाकर यहाँ से वहाँ, वहाँ से यहाँ रख दूँ।

३. यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तते पदं संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत् ॥

—कठ० बल्ली २ श्लोक. १५

वैदिक ब्रह्मचर्य स्तवन

१. इति वा इति मे मनो गामश्वं सनुयामिति ।

कुवित्सोमस्यापामिति

॥

—ऋ० १०।११९।१

अर्थ—मुझे ईश्वर की भक्ति में इतना आनन्द आया कि मैं गाय, घोड़े और सारी सम्पदा को दान कर दूँ और ईश्वर भक्ति में ही लगा रहूँ। क्योंकि मैंने ब्रह्मचर्य अर्थात् वीरता के रस का पान कर लिया है।

२. प्र वाता इव दोधत् उन्मा पीता अयंसत ।

कुवित्सोमस्यापामिति

॥

—ऋ० १०।११९।२

अर्थ—बहुत समय तक ध्यान साधना करने से मेरी प्राणशक्ति का उत्थान हो गया है और शरीर में कम्पन आदि क्रियाएँ प्रारम्भ हो गई हैं और मेरे प्राण उर्ध्वगति को प्राप्त हो रहे हैं। क्योंकि मैंने ब्रह्मचर्य, अर्थात् वीरता के रस का सोमपान कर लिया है।

३. नहि मे अक्षिपच्चनाच्छान्तसुः पञ्च कृष्टयः ।

कुवित्सोमस्यापामिति

॥

—ऋ० १०।११९।६

अर्थ—मैंने सोमरस का, अर्थात् ब्रह्मचर्य के अमृतरस का पान कर लिया है, बहुत-बहुत पान कर लिया है। मुझमें वह शक्ति आ गयी है कि संसार का कोई मनुष्य मेरा बाल भी बाँका नहीं कर सकता।

४. नहि मे रोदसी उभे अन्यं पक्षं च न प्रति ।

कुवित्सोमस्यापामिति

॥

—ऋ० १०।११९।७

अर्थ—मैं तो इतना महान् हो गया हूँ कि ये विशाल द्यावापृथिवी मेरे एक पासे के बराबर भी नहीं हैं। मैंने ब्रह्मचर्य अर्थात् वीरता के रस का पान कर लिया है, बहुत-बहुत पान कर लिया है।

५. अभि द्यां महिना भुवमभीऽमां पृथिवीं महीम् ।

कुवित्सोमस्यापामिति

॥

—ऋ० १०।११९।८

अर्थ—निःसन्देह यह आकाश बड़ा महिमाशाली है, पर अपनी महत्ता से मैंने इसे भी पीछे छोड़ दिया है। निःसन्देह यह पृथिवी बड़ी विशाल है, पर अपनी विशालता से मैंने इसे भी परास्त कर दिया। मैंने ब्रह्मचर्य अर्थात् वीरता के रस का पान कर लिया है, बहुत-बहुत पान कर लिया है।

६. हन्ताहं पृथिवीमिमां नि दधानीह वेह वा।

कुवित्सोमस्यापामिति

॥

—ऋ० १०।११९।९

अर्थ—अरे, मैंने सोमरस ब्रह्मचर्य शक्ति का धारण कर लिया है, अर्थात् पान कर लिया है। कहो तो इस पृथिवी तक को उठाकर यहाँ रख दूँ, वहाँ रख दूँ, जहाँ कहो वहीं रख दूँ, बहुत-बहुत पान कर लिया है।

७. ओषमित्पृथिवीमहं जङ्घनानीह वेह वा।

कुवित्सोमस्यापामिति

॥

—ऋ० १०।११९।१०

अर्थ—मैं पृथिवी को दग्ध करने वाले इस विशाल सूर्य तक को छोटी-सी फुटबाल की तरह एक ठोकर से जहाँ कहो वहीं पहुँचा दूँ। मैंने ब्रह्मचर्य अर्थात् वीरता के रस का पान कर लिया है, बहुत-बहुत पान कर लिया है।

८. अहमस्मि महामहोऽभिनभ्यमुदीषितः ।

कुवित्सोमस्यापामिति

॥

—ऋ० १०।११९।१२

अर्थ—अरे, मैं तो आकाश में उदित साक्षात् महातेजस्वी सूर्य हो गया हूँ। मैंने ब्रह्मचर्य अर्थात् वीरता के रस का पान कर लिया है, वीरता के रस का पान कर लिया है, बहुत-बहुत पान कर लिया है।

मैं

ब्रह्मचारी हूँ ब्रह्मचारी हूँ ब्रह्मचारी हूँ।

या यूँ भी कह सकते हैं—

मैं

ब्रह्मचारिणी हूँ, ब्रह्मचारिणी हूँ, ब्रह्मचारिणी हूँ।

ब्रह्मचर्य की महिमा

वैदिक शास्त्रों में, ब्राह्मण ग्रन्थों में, मनुस्मृति, वाल्मीकीय रामायण, महाभारत, व्याकरण महाभाष्य, आयुर्वेद चरक संहिता, अष्टाङ्गयोग, योग दर्शन, उपनिषदों और चाणक्य सूत्र इत्यादि ग्रन्थों में ब्रह्मचर्य की महिमा व गरिमा पर विशेष रूप से प्रकाश डाला गया। ब्रह्मचर्य का गुणगान, अर्थात् ब्रह्मचर्य की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की गई है। उपरोक्त ग्रन्थों में बहुत कुछ कहा गया है।

(१) ब्रह्मचर्य शब्द की निरुक्त द्वारा व्याख्या—

ब्रह्मचर्य शब्द का अर्थ यह है कि, “ब्रह्मणे वेदादिविद्यायै चर्यते इति ब्रह्मचर्यम्” ब्रह्म नाम वेद विद्या का है। वेदादि विद्याओं के लिये जो व्रत धारण किया जाता है उसको ब्रह्मचर्य कहते हैं। और ब्रह्मचर्यव्रत को धारण करने वाले को ब्रह्मचारी कहते हैं। जैसे “ब्रह्मणि चरितुं शीलमस्यास्तीति ब्रह्मचारी” अथवा “ब्रह्म वेदस्तदध्ययनार्थं तद् व्रतं तदपि ब्रह्म तच्चरतीति ब्रह्मचारी” ब्रह्म (वेदविद्या) को प्राप्त करने का शील जिसमें हो, वह ब्रह्मचारी कहाता है। अथवा ब्रह्म वेदविद्या के पढ़ने के अर्थ जो जितेन्द्रियादि व्रत हैं उसको भी ब्रह्म कहते हैं। उस ब्रह्म, अर्थात् ब्रह्मचर्य व्रत को धारण करने वाले को ब्रह्मचारी कहते हैं।

ब्रह्म का अर्थ है परमात्मा और वेद। वेद ज्ञान को कहते हैं। विद्यार्थी जीवन में ज्ञान के लिये चर्य, अर्थात् आचरण करने योग्य अनुष्ठान ब्रह्मचर्य है। ज्ञानार्थ आचरण करने वाला बालक ब्रह्मचारी कहलाता है।

ब्रह्मचर्य शब्द का अर्थ—

ब्रह्मचारी वह है जो अहर्निश ब्रह्म की चर्या में संलग्न है। अथर्ववेद के ब्रह्मचर्य-सूक्त के प्रथम मन्त्र में ही ब्रह्मचारी की परिभाषा कर दी गई है कि जो ब्रह्म को चाहता हुआ उसकी प्राप्ति के लिए द्यावा-पृथिवी में विचरणशील है, वह ब्रह्मचारी है—ब्रह्म

इष्णन् चरति इति ब्रह्मचारी। मन्त्र इस प्रकार है—“ब्रह्मचारी इष्णन् चरति रोदसी उभे।” इस मन्त्र पर सायण का भाष्य भी द्रष्टव्य है—“वेदात्मके अध्येतव्ये चरितुं शीलम् यस्य स ब्रह्मचारी”—ब्रह्म, अर्थात् वेदात्मक अध्ययन में गति करने का जिसे स्वभाव है वह ब्रह्मचारी है। अतः स्पष्ट हो गया कि ब्रह्म का अर्थ वेद है, उसकी चर्या है ब्रह्मचर्या। भगवान् वेद व्यास ने ‘ब्रह्म’ वेद के दो अर्थ किए हैं, पहला शब्दब्रह्म और दूसरा परब्रह्म। शब्द-ब्रह्म का अर्थ है वेद और पर-ब्रह्म का अर्थ है, परात्पर सत्ता—ईश्वर। परिणामतः ब्रह्मचारी वह है जो वेदाध्ययन और ईशचिन्तन में निरत रहता हो। ब्रह्मचारी के लिए सर्वप्रथम शब्दब्रह्म में निष्णात होना आवश्यक है, फिर परब्रह्म के चिन्तन में संलग्न रहना। शब्दब्रह्म में निष्णात हुए बिना वह परब्रह्म को नहीं पा सकता। भगवान् व्यास का यह वचन स्मरणीय है—“द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये शब्दब्रह्म परं च यत्। शब्दब्रह्मणि निष्णातः परं ब्रह्माधिगच्छति।” अब स्पष्ट हो गया कि ब्रह्मचारी किस ब्रह्म की चाहना से विचरणशील है—प्रथम वेद, दूसरे ईश्वर। यदि कन्या को ब्रह्मचारी रहना है तो उसे ब्रह्म की चर्या करनी होगी। चर्या—मात्र ही नहीं करनी होगी, अपितु उसमें निष्णात होना होगा। वेदब्रह्म में निष्णात हुए बिना परब्रह्म की प्राप्ति असम्भव है। परिणामतः कन्याओं को ब्रह्मचारी रहना उन्हें वेदाधिकार और ईश्वराधिकार प्रदान करता है और वेदाधिकार व ईश्वराधिकार उसके विधायक चिह्न ब्रह्मसूत्र का अधिकार भी प्रदान करता है, अतः कन्याओं को यज्ञोपवीताधिकार स्वतः सिद्ध है।

प्रश्न—ब्रह्मचारी किसको कहते हैं ?

उत्तर—जो जितेन्द्रिय होके ब्रह्म, अर्थात् वेदविद्या के लिए आचार्यकुल में जाकर विद्या-ग्रहण के लिए प्रयत्न करे, वह ब्रह्मचारी कहाता है।

—व्यवहारभानु से उद्धृत

पञ्चभूतों का सार

छान्दोग्योपनिषद् प्रपाठक में लिखा है—

एषां भूतानां पृथिवी रसः पृथिव्या आपो रसः, अपा मोषधयो रसः, ओषधीनां पुरुषो रसः, पुरुषस्य वाग्रसो, वाच ऋग्रस, ऋचः साम रसः साम्न उद्गीथो रसः ॥ २ ॥

स एष रसानां रसतमः परमः परार्थोऽष्टमो यदुद्गीथ ॥ ३ ॥

अर्थ—इन पञ्चभूतों का समस्त भूतों का सारमय होने से पृथिवी रस है। पृथिवी का जल रस=सार है। जल का ओषधि=अन्नादि रस है। ओषधियों का पुरुष रस है। पुरुष का रस वाणी है। वाणी का ऋचाएँ रस है। ऋचा का रस साम गान है। साम का रस ओङ्कार है।

जो उद्गीथ=ओङ्कार है वह यह आठवाँ रस, सम्पूर्ण रसों में उत्कृष्ट रस सर्वश्रेष्ठ सर्वोच्च स्थान है।

व्याख्या—रस शब्द, सार, कारण, आधार, जीवन रस, आश्रय, स्थिति, गति, भूषण, सुन्दर, तेज आदि अनेक अर्थों में आया है। यहाँ भी कारण आदि अर्थों ही में यह शब्द प्रयुक्त हुआ है।

ओषधि से वीर्य और वीर्य से पुरुष की उत्पत्ति सर्वसम्मत सिद्धान्त है। संस्कृत में जल के अनेक नामों में से एक नाम जीवन भी है।

पुरुष का रस वाणी इसीलिए है कि उसी से पुरुष की योग्यता आदि सभी बातें प्रकट हो जाती है। यहाँ वाणी का मुख्य रीति से अभिप्राय उस वाणी से है। जो मनुष्य के ज्ञान, अनुभव और लोकहित की भावना से पूर्ण कल्याणमयी वाणी उसके हृदय से रस की तरह निकला करती है। उसी वाणी का सार=आधार ऋचाएँ और ऋचाओं का रस=शोभा सामगान हुआ करती है। उस सामगान का असली सार सर्वोत्कृष्ट उद्गीथ=ओङ्कार ही है ॥ २-३ ॥

अन्नाद्रेतः रेतसः पुरुषः ।

—तैत्तिरीयोपनिषद्

अन्न से वीर्य और वीर्य से पुरुष उत्पन्न होता है।

सुश्रुताचार्य ने लिखा है—

रसाद्रक्तं ततो मांसं मांसान्मेदः प्रजायते।

मेदसोऽस्थि ततो मज्जा मज्जातः शुक्रसम्भवः ॥

भोजन किये हुए पदार्थ से पहले जो तत्त्व बनता है, उसे रस कहते हैं, उस रस का नाम वीर्य है। रस से रक्त, रक्त से मांस, मांस से मेद (मांस के ऊपर चिकनाई) उत्पन्न होता है, मेद से हड्डी, हड्डी से मज्जा, मज्जा से वीर्य-‘वीर्य’ अन्तिम धातु है। शरीरूपी मशीन में इसके बनने का दर्जा सातवाँ है। इसके बनाने में शरीर को जीवन के लिये आवश्यक अन्य पदार्थों की अपेक्षा अधिक परिश्रम करना पड़ता है। रस की अपेक्षा रक्त में तत्त्व भाग अधिक है। उतरोत्तर सार-भाग बढ़ता ही जाता है। शरीर की भौतिक शक्तियों का अन्तिम सार वीर्य है। थोड़े से वीर्य को बनाने के लिये रक्त की पर्याप्त मात्रा की आवश्यकता पड़ती है। किञ्चिन्मात्र वीर्य का नष्ट हो जाना अत्यधिक रुधिर के नष्ट हो जाने के बराबर है। आयुर्वेद के इस सिद्धान्त को अनेक पाश्चात्य पण्डितों ने भी मुक्तकण्ठ से स्वीकार किया है। डॉ० कोवन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक ‘दि साइंस ऑफ ए न्यू लाइफ’ के १०६ पृष्ठ पर लिखा है—“शरीर के किसी भाग में से यदि ४० औंस रुधिर निकाल लिया जाये, तो वह एक औंस वीर्य के बराबर होता है, अर्थात् ४० औंस रुधिर के एक औंस वीर्य बनता है।”

पुरुष चालीस दिन तक जो विविध प्रकार का और पौष्टिक भोजन करता है, वह यदि ठीक प्रकार से पच जाये तो उससे एक सेर शुद्ध रक्त बनता है फिर उस एक सेर शुद्ध रक्त से एक तोला शुद्ध वीर्य बनता है। अतः ब्रह्मचर्य एक महामूल्य या अमूल्य महौषध है। मानव के ऊँचे उठाने के लिये है और ब्रह्मचारी के लिये तो ब्रह्मचर्य संजीवन रसायन है। विद्या प्राप्ति में अनिष्फल साधन है। और भी कहा है—

ओजस्तु तेजो धातूनां, शुक्रान्तानां परं स्मृतम्।

यन्नाशे नियतं नाशो, यस्मिंस्तिष्ठति जीवनम्॥

—वृद्ध वाग्भट

ओज रस से लेकर वीर्य पर्यन्त धातुओं का तेज है, जिस के नष्ट होने पर कोई जीवित नहीं रह सकता। इसके रहने पर ही जीवन धारण किया जा सकता है।

ओजः सर्वंशरीरस्थं, स्निग्धं शीतं स्थिरं सितम्।

सोमात्मकं शरीरस्य, बलपुष्टिकरं मतम्॥

—योग चिन्तामणि

ओज का निवास सब शरीर भर में है। यह चिकना, शीतल, स्थिर, उज्ज्वल होता है। यह शरीर भर में तेज फैलाने वाला और बल-पुष्ट का बढ़ाने वाला है।

चित्तायत्तं नृणां शुक्रं, शुक्रायत्तञ्च जीवितम्।

तस्माच्छुक्रं मनश्चैव, रक्षणीयं प्रयत्नतः॥

चित्त के अधीन मनुष्य का वीर्य होता है, और वीर्य के वश में जीवन है। इसलिए मन और वीर्य की यत्नपूर्वक रक्षा करनी चाहिए।

शुक्रायत्तं बलं पुंसः।

—वैद्यक

इसके कारण पुरुष का शारीरिक बल वीर्य होता है।

शील और ब्रह्मचर्य

आपस्तम्ब धर्मसूत्र (१।३।१७-२४) में ब्रह्मचारी का शील इस प्रकार वर्णित किया गया है—

मृदुः ॥ १७ ॥

ब्रह्मचारी कोमल स्वभाव वाला हो, कठोर न हो।

शान्तः ॥ १८ ॥

वह सदा शान्त रहे, जितेन्द्रिय हो।

दान्तः ॥ १९ ॥

वह मन को वश में रखने वाला हो, अपने कर्तव्यपालन में सदा तत्पर रहे।

हीमान ॥ २० ॥

वह लज्जाशील हो।

दृढधृतिः ॥ २१ ॥

वह दृढ़ निश्चय वाला हो अथवा पक्की धारणा वाला हो।

अंग्लास्तुः ॥ २२ ॥

वह उत्साह-सम्पन्न हो।

अक्रोधन ॥ २३ ॥

वह क्रोधरहित हो किसी पर क्रोध न करे।

अनसूयुः ॥ २४ ॥

अनिन्दक-निन्दाशील न हो।

ब्रह्मचारी दूसरे के अभ्युदय=उन्नति को देखकर जलनेवाला न हो। विपरीत इसके कठोरता, अशान्ति, घबराहट, अजितेन्द्रियता, निर्लज्जता, अदृढ़, संकल्प, अस्थिर धारणा, क्रोध और निन्दा से मनुष्य के रक्त में उष्णता उत्तेजना मन में विक्षोभ आने से आन्तरिक भाव से या स्वभावतः वीर्य नाश कई प्रकार से हो जाता है।

(क) एक शयीत सर्वत्र। —मनु० २।१८०

ब्रह्मचारी सदा अकेला सोए, दूसरे के साथ बिस्तरे पर न सोए। दूसरे के साथ सोने से भी स्पर्शवश काम-वासना जाग जाती है। तथा “दिवा मा स्वाप्सी” ब्रह्मचारी को दिन में सोता रहेगा, तो रात्रि में नींद न आयेगी या कम आयेगी, क्योंकि मन में प्रत्येक कार्य करने की शक्ति सीमित है जब सोने की शक्ति दिन में व्यय हो गई तब रात्रि में नींद न आयेगी, स्वप्न आयेंगे। पुनः अनुचित स्वप्नों में स्वप्नदोष की सम्भावना है ही।

शास्त्रों में ब्रह्मचारी को स्वाद की दृष्टि से नहीं, किन्तु स्वास्थ्य की दृष्टि से अच्छा भोजन करना चाहिये। अधिक क्षार, खट्टा, तीखा भोजन करने का निषेध है, ऐसा भोजन उत्तेजक है हानिकारक है।

महर्षि द्वारा रचित संस्कार विधि में पुनः ब्रह्मचर्य के विषय में कहा गया है—

(पच्चीस) वर्ष तक ब्रह्मचर्य से बलवान् न हुए तो मध्यम सवन जोकि आगे ४४ (चवालीस) वर्ष तक का ब्रह्मचर्य कहा है, उसको पूर्ण करने के लिए मुझमें सामर्थ्य न हो सकेगा, किन्तु प्रथम कोटि का ब्रह्मचर्य मध्यम कोटि के ब्रह्मचर्य को सिद्ध करता है, इसलिए क्या मैं तुम्हारे सदृश मूर्ख हूँ जो इस शरीर, प्राण,

अन्तःकरण और आत्मा के संयोगरूप सब शुभ गुण-कर्म और स्वभाव के साधन करने वाले इस संघात को शीघ्र नष्ट करके अपने मनुष्य-देह धारण के फल से विमुख रहूँ ? और सब आश्रमों के मूल, सब उत्तम कर्मों में उत्तम कर्म और सबके मुख्य कारण ब्रह्मचर्य को खण्डित करके महादुःखसागर में कभी न डूबूँगा ? किन्तु जो प्रथम आयु में ब्रह्मचर्य करता है, वह ब्रह्मचर्य के सेवन से विद्या को प्राप्त होके निश्चित रोगरहित होता है। इसलिए तुम मूर्ख लोगों के कहने से ब्रह्मचर्य का लोप मैं कभी न करूँगा ॥ ३ ॥

और जो ४४ (चवालीस) वर्ष तक, अर्थात् जैसा ४४ (चवालीस) अक्षर का त्रिष्टुप् छन्द होता है, तद्वत् जो मध्यम ब्रह्मचर्य करता है, वह ब्रह्मचारी रुद्ररूप प्राणों को प्राप्त होता है कि जिसके आगे किसी दुष्ट की दुष्टता नहीं चलती और वह सब दुष्ट कर्म करनेवालों को सदा रुलाता रहता है ॥ ४ ॥

यदि मध्यम ब्रह्मचर्य के सेवन करनेवाले से कोई कहे कि तू इस ब्रह्मचर्य को छोड़ विवाह करके आनन्द को प्राप्त हो, उसको ब्रह्मचारी यह उत्तर देवे कि—जो सुख अधिक ब्रह्मचर्याश्रम के सेवन से होता और विषय-सम्बन्धी भी अधिक आनन्द होता है, वह ब्रह्मचर्य को न करने से स्वप्न में भी नहीं प्राप्त होता, क्योंकि सांसारिक व्यवहार, विषय और परमार्थ-सम्बन्धी पूर्ण सुख को ब्रह्मचारी ही प्राप्त होता है, अन्य कोई नहीं। इसलिए मैं इस सर्वोत्तम सुख-प्राप्ति के साधन ब्रह्मचर्य का लोप न करके विद्वान्, बलवान्, आयुष्मान्, धर्मात्मा होके सम्पूर्ण आनन्द को प्राप्त होऊँगा। तुम्हारे निर्बुद्धियों के कहने से शीघ्र विवाह करके स्वयं और अपने कुल को नष्ट-भ्रष्ट कभी न करूँगा ॥ ५ ॥

और जो ४८ (अड़तालीस) वर्षपर्यन्त, जैसाकि ४८ (अड़तालीस) अक्षर का जगती छन्द होता है, वैसे इस उत्तम ब्रह्मचर्य से पूर्णविद्या, पूर्णबल, पूर्णप्रज्ञा, पूर्ण शुभ गुण-कर्म-स्वभावयुक्त, सूर्यवत् प्रकाशमान होकर ब्रह्मचारी सब विद्याओं को ग्रहण करता है ॥ ६ ॥

यदि कोई इस सर्वोत्तम धर्म से गिराना चाहे, उसको ब्रह्मचारी उत्तर देवे कि—अरे छोकरोँ के छोकरे! मुझसे दूर रहो। तुम्हारे दुर्गन्धरूप भ्रष्ट वचनों से मैं दूर रहता हूँ। मैं इस उत्तम ब्रह्मचर्य

का लोप कभी न करूँगा। इसको पूर्ण करके सर्वरोगों से रहित, सर्वविद्यादि शुभ गुण-कर्म-स्वभावसहित होऊँगा। इस मेरी शुभ प्रतिज्ञा को परमात्मा अपनी कृपा से पूर्ण करे। जिससे मैं तुम निर्बुद्धियों को उपदेश और विद्या पढ़ाके, विशेष तुम्हारे बालकों को आनन्दयुक्त कर सकूँ ॥ ७ ॥

चतस्रोऽवस्थाः शरीरस्य वृद्धिर्यौवनं सम्पूर्णता किञ्चित् परिहाणिश्चेति। तत्राषोडशाद् वृद्धिः। आपञ्च-विंशतेर्यौवनम्। आचत्वारिंशतस्सम्पूर्णता। ततः किञ्चित् परिहाणिश्चेति ॥ १ ॥

पञ्चविंशे ततो वर्षे पुमान्नारी तु षोडशे।

समत्वागतवीर्यौ तौ जानीयात् कुशलो भिषक् ॥ २ ॥

यह धन्वन्तरिजीकृत सुश्रुतग्रन्थ का प्रमाण है।

अर्थ—इस मनुष्य देह की चार अवस्था हैं—एक वृद्धि, दूसरी यौवन, तीसरी सम्पूर्णता, चौथी किञ्चित् हानि करनेहारी। इनमें सोलहवें वर्ष से आरम्भ २५ पच्चीसवें वर्ष में पूर्ति वाली वृद्धि की अवस्था है। जो कोई इस वृद्धि की अवस्था में वीर्यादि धातुओं का नाश करेगा, वह जैसे कुल्हाड़े से काटे वृक्ष वा दण्डे से फूटे घड़े के समान अपने सर्वस्व का नाश करके पश्चात्ताप करेगा। पुनः उसके हाथ में सुधार कुछ भी न रहेगा। दूसरी जो युवावस्था उसका आरम्भ २५ पच्चीसवें वर्ष से और पूर्ति ४० चालीसवें वर्ष में होती है। जो कोई इसको यथावत् संरक्षित न कर रक्खेगा, वह अपनी भाग्यशालीनता को नष्ट कर देवेगा। और तीसरी पूर्ण युवावस्था चालीसवें वर्ष में होती है। जो कोई ब्रह्मचारी होकर पुनः ऋतुगामी, पर-स्त्रीत्यागी, एकस्त्रीव्रत, गर्भ रहे पश्चात् एक वर्षपर्यन्त ब्रह्मचारी न रहेगा, वह भी बना-बनाया धूल में मिल जाएगा और चौथी चालीसवें वर्ष से यावत् निर्वीर्य न हो, तवात् किञ्चित् हानिरूप अवस्था है। यदि किञ्चित् हानि के बदले वीर्य की अधिक हानि करेगा, वह राजयक्ष्मा और भगन्दरादि रोगों से पीड़ित हो जाएगा और जो इन चारों अवस्थाओं को यथोक्त सुरक्षित रक्खेगा, वह सर्वदा आनन्दित होकर सब संसार को सुखी कर सकेगा ॥ १ ॥

अब इसमें इतना और विशेष समझना चाहिए कि स्त्री और पुरुष के शरीर में पूर्वोक्त चारों अवस्थाओं का एक-सा समय नहीं

है, किन्तु जितना सामर्थ्य पच्चीसवें वर्ष में पुरुष के शरीर में होता है उतना सामर्थ्य स्त्री के शरीर में सोलहवें वर्ष में हो जाता है। यदि बहुत शीघ्र विवाह करना चाहें तो २५ पच्चीस वर्ष का पुरुष और १६ सोलह वर्ष की स्त्री दोनों तुल्य सामर्थ्यवाले होते हैं। इसलिए इस अवस्था में जो विवाह करना, वह अधम विवाह है ॥ २ ॥

और जो १७ सत्रह वर्ष की स्त्री और ३० तीस वर्ष का पुरुष, १८ अठारह वर्ष की स्त्री और ३६ छत्तीस वर्ष का पुरुष, १९ उन्नीस वर्ष की स्त्री और ३८ अड़तीस वर्ष का पुरुष विवाह करे तो इसको मध्यम समय जानो।

और जो २० बीस, २१ इक्कीस, २२ बाईस, २३ तेईस वा २४ चौबीस वर्ष की स्त्री और ४० चालीस, ४२ बयालीस, ४४ चवालीस, ४६ छयालीस और ४८ अड़तालीस वर्ष का पुरुष होकर विवाह करे, वह सर्वोत्तम है।

कन्या और ब्रह्मचर्य

वेद में कन्याओं के पढ़ने का प्रमाण—

ब्रह्मचर्येण कन्याः युवानं विन्दते पतिम् ॥

—अथर्व० अनु० ३। प्र० २४। कां० ११। मं० १८

जैसे लड़के ब्रह्मचर्य-सेवन से पूर्ण विद्या और सुशिक्षा को प्राप्त होके युवती, विदुषी, अपने अनुकूल, प्रिय, सदृश स्त्रियों के साथ विवाह करते हैं, वैसे (कन्या) कुमारी (ब्रह्मचर्येण) ब्रह्मचर्य-सेवन से वेदादि शास्त्रों को पढ़, पूर्ण विद्या और उत्तम शिक्षा को प्राप्त, युवती होके, पूर्ण युवावस्था में अपने सदृश, प्रिय, विद्वान् (युवानम्) और पूर्ण युवावस्थायुक्त पुरुष को (विन्दते) प्राप्त होवे, इसलिए स्त्रियों को भी ब्रह्मचर्य और विद्या का ग्रहण अवश्य करना चाहिए।

इसलिए वे धन्य और कृतकृत्य हैं जो कि अपने सन्तानों को ब्रह्मचर्य, उत्तम शिक्षा और विद्या से शरीर और आत्मा के पूर्ण बल को बढ़ाते हैं। जिससे वे सन्तान मातृ, पितृ, पति, सासु, श्वसुर, राजा, प्रजा, पड़ोसी, इष्टमित्र और सन्तानादि से यथायोग्य धर्म से वर्तें। यही कोश अक्षय है। इसको जितना व्यय करे, उतना ही

बढ़ता जाए। अन्य सब कोश व्यय करने से घट जाते हैं और दायभागी भी निज भाग ले लेते हैं और विद्याकोश का चोर वा दायभागी कोई भी नहीं हो सकता। इस क्रोश का, रक्षा और वृद्धि करनेवाला विशेष राजा और प्रजा भी हैं।

कन्यानां सम्प्रदानं च कुमारानां च रक्षणम् ॥

—मनु० [७।१५२] ॥

राजा को योग्य है कि सब कन्या और लड़कों को उक्त समय से उक्त समय तक ब्रह्मचर्य में रखके विद्वान् कराना। जो कोई इस आज्ञा को न माने, तो उसके माता-पिता को दण्ड देना, अर्थात् राजा की आज्ञा से आठ वर्ष के पश्चात् लड़का वा लड़की किसी के घर में न रहने पावे, किन्तु आचार्यकुल में रहें। जब तक समावर्तन का समय न आवे, तब तक विवाह न होने पावे।

सर्वेषामेव दानानां ब्रह्मदानं विशिष्यते।

वार्यन्नगोमहीवासस्तिलकाञ्चनसर्पिषाम् ॥

—मनु० [४।२३३] ॥

संसार में जितने दान हैं, अर्थात् जल, अन्न, गौ, पृथिवी, वस्त्र, तिल, सुवर्ण और घृतादि इन सब दानों से वेदविद्या का दान अतिश्रेष्ठ है। इसलिए जितना बन सके उतना प्रयत्न, और धन का विद्या की वृद्धि में किया करें। जिस देश में यथायोग्य ब्रह्मचर्य, विद्या और वेदोक्त धर्म का प्रचार होता है, वही देश सौभाग्यवान् होता है।

आयु और ब्रह्मचर्य

(क) प्रथमे नार्जितं विद्या, द्वितीय नार्जितं धनम्।

तृतीये नार्जितं पुण्यं, चतुर्थे किं करिष्यति ॥

प्रथम ब्रह्मचर्य अवस्था में विद्या का अभ्यास करना चाहिये। द्वितीय अवस्था में धनोपार्जन, अर्थात् गृहस्थाश्रम में प्रवेश करना चाहिये। तृतीय अवस्था में वानप्रस्थ अर्थात् 'पुण्य' ब्रह्मचर्य का पालन परोपकार के कार्यों में हाथ बटाना चाहिये। चतुर्थावस्था में मनुष्य का शरीर शिथिल होने पर कुछ भी नहीं कर सकेगा।

(ख) ऐतरेय ब्राह्मणकार ने पुण्य के विषय में प्रश्नोत्तर करके

स्वयं उत्तर भी दिया है।

“किं पुण्यम्? ब्रह्मचर्यम्।”

अर्थात् संसार में सब पुण्यों का पुण्य ब्रह्मचर्य है।

ब्रह्मचर्य के दीवाने का परीक्षा लेना चाहें तो पता चलेगा कि वह ब्रह्ममुर्दुत में कभी भी शयन नहीं करता। ब्रह्ममुर्दुत में सोने वाला व्यक्ति कभी भी ब्रह्मचारी नहीं हो सकता। क्योंकि स्वप्नदोषादि रोग प्रातःकाल सोते रहने से जो मल-मूत्र से मलाशय और मूत्राशय भरे हुए होते हैं उनकी वीर्यकोष पर जो-दबाव पड़ता है, और उसी से वीर्य नष्ट हो जाता है। और गन्दे स्वप्न भी प्रातःकाल के पीछे ही आते हैं। जो स्वप्न दोष का कारण बनते हैं। प्रातःकाल सोने वाले व्यक्ति के आरोग्य स्वास्थ्य, बल, बुद्धि, तेज को हर के निर्बल, दरिद्र, निर्बुद्धि और अल्पायु बनाती हैं। कहा भी गया है—

“ब्राह्मे मुहूर्ते या निद्रा सा पुण्यक्षयकारिणी।”

ब्राह्ममुर्दुत में सोना सब पुण्यों अर्थात् शुभ कार्यों का क्षय (नाश) करने वाला होता है।

ब्रह्मचर्य और वेदवेत्ता महर्षि भरद्वाज

भरद्वाजो ह त्रिभिरायुर्भिर्ब्रह्मचर्यमुवास। तं ह जीर्णं स्थविरं शयानम् इन्द्र उपब्रज्योवाच। भारद्वाज! यत्ते चतुर्थमायुर्दद्यां किमनेन कुर्या इति। ब्रह्मचर्यमे वैतेन चरयेमिति होवाच। तं त्रीन् गिरिरूपान् विज्ञातानिव दर्शयाञ्चकार तेषां हैकैकस्मान्मुष्टिमाददे। स होवाच भरद्वाजेत्यामन्त्र्य वेदा वा एते, अनन्ता वै वेदाः एतैस्त्रिभिरायुर्भिर्न्ववोचथाः अतस्त इतरदनूक्तमेव ॥

—तै० ब्रा० ३।१०।११।३

अर्थात् भरद्वाज ने ३०० वर्षपर्यन्त (मनुष्य की ३ आयु शतायुर्वै पुरुषः के अनुसार $१०० \times ३ = ३००$ ब्रह्मचर्य अर्थात् वेदों का अध्ययन किया। इस प्रकार अध्ययन करते-करते वह जब अत्यन्त वृद्धावस्था को प्राप्त हो गया तो इन्द्र ने उसके समीप आकर कहा यदि तुझे और भी आयु मिले तो तू उससे क्या करेगा? भरद्वाज ने उत्तर दिया कि उससे भी मैं वेदों का अध्ययनादि रूप ब्रह्मचर्य ही करूँगा। इन्द्र ने पर्वत के समान तीन ज्ञान राशिरूप

वेदों को दिखाया और उनमें से प्रत्येक राशि से मुट्ठी-सी भरली और भरद्वाज को कहा कि ये वेद इस प्रकार ज्ञान की राशि या पर्वत के समान हैं जिनके ज्ञान का कहीं अन्त नहीं। यद्यपि तूने ३ आयु पर्यन्त (३०० वर्ष तक) वेदों का अध्ययन किया है तथापि तुझे उनके सम्पूर्ण ज्ञान का अन्त नहीं प्राप्त हुआ।

वेदवेता नारदमुनि और ब्रह्मचर्यव्रती सनत्कुमार

कहते हैं कि एक बार सनत्कुमार अर्थात् सदा ब्रह्मचर्य व रूप रहनेवाले ऋषि के पास नारदमुनि पहुँचे और उनसे कहा, भगवन्! मुझे ज्ञान दीजिए। ऋषि ने कहा, जो कुछ तुम पहले जानते हो वह बतलाओ, तब मैं उससे आगे तुम्हें शिक्षा दूँगा। नारद ने कहा—

ऋग्वेदं भगवोऽध्येमि यजुर्वेदं सामवेदमाथर्वणं चतुर्थ-
मितिहासपुराणं पञ्चमं वेदानां वेदं पित्र्यं राशिं दैवं निधिं
वाकोवाक्यमेकायनं देवविद्यां ब्रह्मविद्यां भूतविद्यां क्षत्रविद्यां
सर्पदेवजनविद्यामेतद् भगवोऽध्येमि ॥ —छान्दोग्य उपनिषद्

भगवन्! मैंने ऋग्वेद पढ़ा है, यजुर्वेद, सामवेद और चौथा अथर्ववेद, पाँचवाँ इतिहास-पुराण, वेदों के वेद (अर्थात् जिससे वेद स्पष्ट हो जाते हैं), पित्र्य (शूश्रूषा-विज्ञान) राशि (गणित) दैवविद्या (उत्पत्ति-विज्ञान), वाकोवाक्य (तर्कशास्त्र या कानून), एकायन (नीतिशास्त्र-अर्थशास्त्र), देवविद्या (निरुक्त), ब्रह्म-विद्या (ब्रह्म का ज्ञान), भूत-विद्या (भौतिकी रसायन तथा प्राणि-शास्त्र) क्षत्र-विद्या (धनुर्विद्या), नक्षत्रविद्या (ज्योतिष), सर्प-विद्या (विष-ज्ञान), देवजनविद्या (ललित कला)—इन्हें भी पढ़ा है।

भगवन्! यह सब-कुछ पढ़कर मैं 'मन्त्रवित्' हुआ हूँ 'आत्मवित्' नहीं हुआ—मुझे शब्दज्ञान तो हो गया है, आत्मज्ञान नहीं हुआ है।

ब्रह्मचर्य और ब्रह्मवादिनी सुलभा

वैदिककाल में स्त्रियाँ ऊँची-से-ऊँची शिक्षा प्राप्त करती थीं। यजुर्वेद के १४।४ में स्त्री को 'सोमपृष्ठा' कहा है जिसका अभिप्राय यह है कि वह वेद-मन्त्रों के विषय में जिज्ञासा करती

रहती है। महाभारत में 'सुलभा' नाम की ब्रह्मवादिनी संन्यासिनी हुई है, जोकि उस समय में प्रसिद्ध थी। सुलभा का सङ्कल्प था कि जो कोई उसे शास्त्रार्थ में परास्त कर देगा, उसी से विवाह करेगी। सुलभा का यह निश्चय उसके अगाध पाण्डित्य का द्योतक है। उसके जनक महाराज के साथ शास्त्रार्थ का वृत्तान्त पाया जाता है जिसने अपना परिचय जनक महाराज को इन शब्दों में दिया है—

प्रधानो नाम राजर्षिव्यक्तं ते श्रोत्रमागतः ।
कुले तस्य समुत्पन्नां, सुलभां नाम विद्धि माम् ॥
साहं तस्मिन् कुले जाता, भर्तर्यसति मद्विधे ।
विनीता मोक्षधर्मेषु, चराम्येका मुनिव्रतम् ॥

—शान्तिपर्व अ० ३२०।८२

अर्थात् मैं सुप्रसिद्ध राजर्षि के कुल में उत्पन्न सुलभा हूँ। अपने योग्य पति न मिलने से मैंने गुरुओं से वेदादि शास्त्रों की शिक्षा प्राप्त करके संन्यासाश्रम ग्रहण कर लिया है।

विमर्श—इससे स्पष्ट होता है कि सुलभा देवी केवल वेदों की विदुषी ही न थी वह वेदों का अध्यापन भी कराती थी।

उध्वरेता और नैष्ठिक ब्रह्मचारी

अष्टाशीति सहस्राण्यूध्वरेतसामृषीणां ।
वभूवुस्तत्रागस्याष्टमैर्ऋषिभिः प्रजनोऽभ्युपगतः ॥

—महाभाष्य अ० ४ पा० १ सू० ७८

अठासी हजार उध्वरेता ऋषि नैष्ठिक ब्रह्मचारी हुए हैं उनमें से अगस्त्य प्रभृति आठ ऋषियों ने सन्तति उत्पन्न की। जिसमें आज के युग में उध्वरेता महर्षि दयानन्द सरस्वती हुए हैं।

स्त्री ब्रह्मा है

स्त्री हि ब्रह्मा वभूविथ ।

—वेद

हे नारी! तू नीचे देख, ऊपर को मत देख। दोनों पाँवों को सावधानी पूर्वक रख कर चल, तेरे किसी प्रकार के अङ्ग दिखाई न दे, क्योंकि स्त्री को ब्रह्मा कहा है। स्त्री ब्रह्मा, विष्णु और महेश है। ब्रह्मा अर्थात् सन्तान को उत्पन्न करने वाली है। विष्णु अर्थात्

सन्तान को पालन करने वाली है। महेश अर्थात् सन्तान को नाना प्रकार के संस्कारों से उसके जीवन का निर्माण करती है। आज की नारी अर्ध नग्न नारीश्वर के कारण सृष्टि का क्रम बिगड़ रहा है। राष्ट्र निर्मात्री न होकर पतन की ओर अग्रसर है। खान-पान, पहनावा और पश्चिमी सभ्यता अन्धानुकरण है।

विद्या और ब्रह्मचर्य

निरुक्त में कहा कि—

विद्या ह वै ब्राह्मणमाजगाम गोपाय मा शेवधिष्टेऽहमस्मि।

असूयकायानृजवेऽयताय न मा ब्रूयाः वीर्यवती यथा स्याम्॥

विद्या ब्राह्मण के पास गई और बोली—हे ब्राह्मण देवता! तू मेरा रक्षक है, अतः मेरी रक्षा कर। मुझे उन निन्दक लोगों, कपटाचारी और ब्रह्मचर्यहीन को मत दे, जो मुझे प्राप्त कर मेरी निन्दा कराते हैं। ऐसी को दे जो निन्दा आदि गुणों से रहित हों, जिससे मैं वीर्यवती हो जाऊँ।

ब्रह्मचर्य और राजा

ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं वि रक्षति।

आचार्यो ब्रह्मचर्येण ब्रह्मचारिणमिच्छते॥

—अथर्व० ११।५।१७

ब्रह्मचर्य के तप से राजा राष्ट्र की रक्षा करता है और आचार्य ब्रह्मचर्य व्रत के द्वारा ब्रह्मचारी की इच्छा अर्थात् चाहता है। आचार्य अपने ब्रह्मचर्य के बल से ब्रह्मचारियों का हित साधता है। राजा ब्रह्मचर्य के बल से प्रजा को सुख पहुँचता है। अर्थात् अपने प्रभाव से प्रजा पर शासन करता है। राजा बल का प्रतीक है तो आचार्य ज्ञान का प्रतीक है। इस प्रकार से राजा और आचार्य दोनों मिलकर राष्ट्र की सेवा करते हैं।

इस देश में बहुत से राजा हुए जिनमें अश्वपति नामक राजा का नाम उल्लेखनीय है।

हिमालय की ऊँची चोटी से महर्षि मनु ने उच्च स्वर में शिक्षा एवं चरित्र का पाठ पढ़ाया—

अहा! कैसा स्वर्णिम युग था वह, जब संसार भर के जिज्ञासु-पिपासुजन—आत्मकल्याणार्थ आर्यावर्त देश के तपस्वी ब्राह्मणों के चरणों में बैठकर चरित्र की शिक्षा लेते थे। अश्वपति राजा के भवन में जब उद्दालक मुनि पधारे तो मुनि ने राजा के आतिथ्य की उपेक्षा की। अश्वपति समझ गये कि मुनि राजा के अन्न को सम्भवतः दूषित समझकर आतिथ्य सत्कार स्वीकार नहीं कर रहे हैं। तब अश्वपति (राष्ट्रपति) आत्मविश्वास के साथ घोषणा पूर्वक कह रहे हैं—

न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो वा न मद्यपः ।

नानाहिताग्निर्न ना विद्वान् न स्वैरी स्वैरिणी कुतः ॥

—छान्दोग्य ५।११।५

मुनिवर! मेरे जनपद (राज्य) में न कोई चोर है, कोई कज्जूस नहीं है, कोई शराबी नहीं है, कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जो प्रतिदिन अग्निहोत्र न करता हो। कोई अशिक्षित नहीं है, कोई व्यभिचारी पुरुष नहीं है तो फिर व्यभिचारिणी होने का प्रश्न ही नहीं उठता।

विमर्श—तत्कालीन समय में वैदिक धर्मानुसार ब्रह्मचर्य का आचरण करते थे।

ब्रह्मचर्येण वै लोकान् जयन्ति परमर्षयः ।

ब्रह्मचर्य से ही महर्षिजन लोक-लोकान्तरों को जीतते हैं। अर्थात् पूर्वकाल के ऋषि-महर्षियों ने ब्रह्मचर्य से लोक-लोकान्तरों को पराजित किया।

आचार्य चाणक्य के कथनानुसार राजा को इन्द्रियजित ब्रह्मचारी होना चाहिये।

जैसा कि चाणक्य सूत्र में लिखा है—

(१) सुखस्य मूलं धर्मः ।

सुख धर्म से प्राप्त होता है, अर्थात् धर्म मानवोचित कर्तव्यों का पालन ही सुख का मूल है।

(२) धर्मस्य मूलं अर्थः ।

धर्म का मूल अर्थ है। अर्थ को सुरक्षित रखने के लिये राज्य व्यवस्था का महत्त्वपूर्ण सहयोग होता है।

(३) अर्थस्य मूलं राज्यम् ।

अर्थ का मूल है—राज्य, अर्थात् राज्य की सहायता अथवा व्यवस्था के बिना धन संग्रह करना कठिन है। धन संग्रह के लिये राज्य में स्थिरता और शान्ति स्थापित होना अत्यन्त आवश्यक होता है। जब तक राज्य में अशान्ति रहती है तब तक राज्य सम्पन्न नहीं हो सकता।

(४) राज्यमूलमिन्द्रिय जय।

राज्य का मूल इन्द्रियजित होता है, अर्थात् अपनी इन्द्रिय को वश में रखना।

(५) इन्द्रिय जयस्य मूलं विनय।

इन्द्रिय जय का मूल कारण विनय है, विनय अर्थात् नम्रता सुशीलता है।

(६) विनयस्य मूलं वृद्धोपसेवा।

ज्ञान वृद्धो की सेवा विनय का मूल है।

(७) वृद्धसेवया विज्ञानम्।

ज्ञान वृद्ध की सेवा से विज्ञान की प्राप्ति होती है। मनुष्य वृद्धों की सेवा से ही व्यवहार कुशल होता है और उसे अपने कर्तव्य की पहचान होती है।

(८) विज्ञानेनात्मानं सम्पादयेत्।

राज्याभिलाषी लोग विज्ञान, व्यवहार-कुशलता या कर्तव्य का परिचय प्राप्त करके अपने आप को योग्य शासक बनाये।

(९) सम्पादिता जितात्मा भवति।

जो पुरुष ज्ञान-विज्ञान से सम्पन्न होता है, वह स्वयं को भी जीत सकता है, अर्थात् वही संसार में सफल होता है।

(१०) जितात्मा सर्वार्थैः संयुज्येत्।

अपनी इन्द्रियाँ को वश में करने वाला मनुष्य सच्चे अर्थों में सम्पन्न होता है, अर्थात् नीति जानने वाले और अपने ऊपर नियन्त्रण रखने वाले लोग अपने आप को समस्त सम्पत्तियों से सम्पन्न समझे जो व्यक्ति अपने आप को जीत लेता है, अर्थात् अपने ऊपर नियन्त्रण कर लेता है उसकी यह विशेषता होती है कि वह जो कार्य अपने हाथ में लेता है उसे सम्पूर्ण करके ही छोड़ता है। ऐसे व्यक्ति ही धन-धान्य और सम्पत्तियों के स्वामी होते हैं। लक्ष्मी और जो जितेन्द्रिय होता है सिद्धियाँ ऐसे व्यक्ति

के वश में रहती है।

आद्य शंकराचार्यजी द्वारा प्रश्नोत्तरी के रूप में इन्द्रियजित कौन है का दिग्दर्शन कराया—

(१) प्रश्न—के शत्रवः सन्ति।

शत्रु कौन है।

उत्तर—निज इन्द्रियाणि।

अपनी ही इन्द्रियाँ।

(२) प्रश्न—के मित्राणि।

मित्र कौन है।

उत्तर—यानि तानि जितानि।

इन इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर लेवे तो वही मित्र है।

विमर्श—इन्द्रियों को वश में करना ही ब्रह्मचर्य जीवन है।

ब्रह्मचर्य का प्रभाव

पुत्र और योगिराज श्री कृष्ण

महाभारत में एक कहानी है कि योगिराज श्री कृष्ण और रुक्मिणी ने विवाह के पश्चात् पुत्र की प्राप्ति के लिए बारह वर्ष तक कठोर ब्रह्मचर्य द्वारा हिमालय में तपस्या की।

ब्रह्मचर्यं महद् घोरं तीर्त्वा द्वादश वार्षिकम्।

हिमवत्पाशर्वाभिप्रेत्य यो मया तपसार्जितः ॥

समानव्रतचारिण्यां रुक्मिण्यां योऽन्वजायत।

सनत्कुमारस्तेजस्वी प्रद्युम्नो नाम मे सुतः ॥

—सौप्तिक पर्व १२।३०-३१

जिसका परिणाम यह हुआ कि रूप-रंग में हू-बहू श्री कृष्ण जैसा ही तेजस्वी, वर्चस्वी प्रद्युम्न नाम का पुत्र पैदा हुआ। पुत्र को देखकर पिता श्री कृष्ण प्रतीत होता था पिता श्री कृष्ण को देखकर प्रद्युम्न प्रतीत होता था। माता रुक्मिणी पुत्र और पति के एक-जैसे शरीर व आकृति को देखकर पहचान नहीं कर पाती थीं कि कौन श्री कृष्ण है और कौन प्रद्युम्न है। जब प्रद्युम्न स्वयं हँसकर परिचय देता था तो माता रुक्मिणी समझ पाती थी।

भारतवर्ष में कई स्थानों पर पुत्र और पिता की आकृति एक-

जैसी दिखाई देती है। पिता को देखकर पुत्र और पुत्र को देखकर पिता को पहचान लेते हैं।

प्रायः बहुत-से घरों में एक पिता के दो सन्तान जुड़वे होते हैं। दोनों की आकृति एक-जैसी होती है। दोनों में छोटे-बड़े का अन्तर नहीं कर पाते हैं। परिचय मिलने या पूछने पर छोटे-बड़े का पता चलता है।

बालक के निर्माण में माता-पिता दोनों का ही महत्त्व है। इस विषय पर श्री राम एवं लक्ष्मण का संवाद उत्तम प्रकाश डालता है। ऐसी किंवदन्ती है कि जिस समय श्री राम और लक्ष्मण वन में थे, तब लक्ष्मणजी के ब्रह्मचर्य की परीक्षा के लिए श्री राम ने प्रश्न किया—

पुष्पं दृष्ट्वा फलं दृष्ट्वा दृष्ट्वा च नवयौवनाम्।

एकान्ते काञ्चनं दृष्ट्वा कस्य नो विचलेन्मनः ॥

अर्थ—सुन्दर सुगन्धित पुष्पों को, स्वादिष्ट फलों को और नवयौवना को देखकर तथा एकान्त में पड़े हुए कांचन (सुवर्ण) को देखकर किसका मन विचलित नहीं होता? यतिवर लक्ष्मण उत्तर देते हैं—

माता यस्य प्रतिव्रता पिता च यस्य धार्मिकः।

एकान्ते काञ्चनं दृष्ट्वा तस्य नो विचलेन्मनः ॥

अर्थ—जिसकी माता पतिव्रता (उच्च चरित्रवाली) और पिता धार्मिक (सदाचारी) है उसका मन एकान्त में पड़े हुए सुवर्ण (सोने) को देखकर भी विचलित नहीं होता। सदाचारी तथा धार्मिक माता-पिता बालकों को पवित्र ब्रह्मचर्य की शिक्षा देकर उनका चरित्र-निर्माण करते हैं।

श्री राम भ्राता लक्ष्मण और ब्रह्मचर्य

ऋष्यमूक पर्वत पर जब सीता देवी के आभूषण को पहचाने के लिये लक्ष्मण के सामने रखा गया तब लक्ष्मण कहते हैं—

नाहं जानामि केयूरे नाहं जनामि कुण्डले।

नूपुरे त्वग्नि जानामि नित्यं पादाभिवन्दनात् ॥

न मैं हाथ के बाजूबन्द और न कान के कुण्डल को जानता

हूँ, मैं नित्य प्रतिदिन चरण स्पर्श करता था तो पैरों के नूपुर को जानता हूँ। इससे बढ़कर ब्रह्मचर्य की मिशाल कहीं भी देखने को नहीं मिलती।

ब्रह्मचर्य के बाधक का कारण

अष्टविध मैथुन

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने स्वरचित संस्कार विधि के वेदारम्भ प्रकरण में मैथुन वर्ज्य अर्थात् आठ प्रकार के मैथुन को छोड़ देना। इसी प्रकार सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में भी अष्टमैथुनों पर विशेष रूप से जोर दिया है—

अर्थात्—जब तक वे ब्रह्मचारी वा ब्रह्मचारिणी रहे, तब तक स्त्री और पुरुष का दर्शन, स्पर्शन, एकान्त सेवन, भाषण, विषय कथा, परस्पर कीड़ा, विषय का ध्यान और सङ्ग, इन आठ प्रकार के मैथुनों से अलग रहें। और अध्यापक लोग उनको इन बातों से बचावे, जिससे उत्तम विद्या, शिक्षा, शील स्वभाव, शरीर और आत्मा के बलयुक्त होके, आनन्द को नित्य बढ़ा सकें। ब्रह्मचर्य एक दिव्य शक्ति है, ब्रह्मचर्य से सचमुच ही मनुष्य में दिव्य शक्तियों का संचार होता है। किसी संस्कृत के कवि ने अपृ मैथुन का श्लोक में इस प्रकार चित्र खिंचा है—

स्मरणं कीर्तनं केलिः, प्रेक्षणं गुह्यभाषणम्।

सङ्कल्पोऽध्यवसायश्च क्रिया-निष्पत्तिरेव च॥

एतन्मैथुनमष्टाङ्गं प्रवदन्ति मनीषिणः।

विपरीतं ब्रह्मचर्यमेतदेवाष्ट लक्षणम्॥

—दक्षस्मृति ७।३१।३२

अर्थ—स्मरण, कीर्तन, क्रीड़ा करना, अवलोकन गुप्तभाषण, संकल्प, अध्यवसाय और क्रिया-निवृत्ति ये मैथुन के आठ अङ्ग मनीषियों द्वारा निश्चित किये गये हैं।

(१) स्मरणम्—जिसने कागज के सिनेमा या टेलिवीजन में किसी सुन्दर स्त्री अभिनेत्री को देखा या किसी स्त्री ने अभिनेता को देखा या उसका चाहने वाला हो गया, दिन रात उसका स्मरण करना।

(२) कीर्तनम्—चलचित्र में या स्कूल-कॉलेज, विश्वविद्यालय में देखकर युवति स्त्री या विश्वसुन्दरी के गुणों का गान करना कीर्तन कहलाता।

(३) प्रेक्षणम्—स्त्रियों और युवतियों के रूपलावण्य को, बार-बार कामुक दृष्टि से देखना।

(५) गुह्यभाषणम्—स्कूल-कॉलेज और विश्वविद्यालय में जहाँ सहशिक्षा होती है गुप्त रूप से गलफ्रेण्ड से कामुकता वाली बातें करना।

(६) संकल्पः—प्रत्यक्ष में आकर्षक स्त्री को देखकर उसको प्राप्त करने के लिये दृढ़ संकल्प करना, मैथुन माना गया है।

(७) अध्यवसायः—किसी भी स्थान पर स्त्री सहवास का आनन्द लेना, उस स्त्री को अपना बनाने के लिये प्रयत्न करना, यह मैथुन का सातवाँ लक्षण है।

(८) क्रियानिष्पत्तिः—किसी स्त्री से साक्षात् सम्बन्ध स्थापित करना, मैथुन करके ब्रह्मचर्य नष्ट करना ही क्रिया निष्पत्ति का लक्षण है। ये आठों मैथुन मनुष्य को पतन की ओर ले जाने वाला है, जैसे एक कंजूस साहूकार रुपये को कंजूसी से जमा करता रहता, खर्च नहीं करता, कंजूस साहूकार की भाँति ब्रह्मचारी को वीर्य का संरक्षण करना चाहिये।

ब्रह्मचर्य सदा रक्षेदष्टधा मैथुनं पृथक् । —दक्ष-संहिता

आठ प्रकार के मैथुनों से परे जो ब्रह्मचर्य हैं, उसकी सदा रक्षा करनी चाहिए।

इस सब का सार किसी बुद्धिमान संस्कृत के कवि ने लिखा है—

वेधा द्वेधा भ्रमं चक्रे कान्तासु कनकेषु च ।

तासु तेष्वप्य नासक्तो साक्षाद् भर्गो नराकृतिः ॥

अर्थात् ब्रह्म ने स्त्री और स्वर्ण ये दो चक्र जाल बनाये हैं, जो इनमें नहीं फँसता वह मनुष्य के रूप में ही शिव है।

शिष्य-गुरु संवाद

(क) शिष्य—गुरुवर! विवाह के पश्चात् स्त्री प्रसंग कब

करना चाहिये ?

उत्तर—मनुष्य को एक वर्ष में एक बार।

शिष्य—गुरुजी! एक वर्ष मनुष्य से न रहा जाये तो ?

उत्तर—मनुष्य को छह महीने में एक बार।

शिष्य—गुरुजी! छह मास में न रहा जाय तो ?

उत्तर—मनुष्य को तीन महीने में एक बार।

शिष्य—गुरुजी! तीन मास में न रहा जाय तो ?

उत्तर—मनुष्य को दो मास में एक बार।

शिष्य—गुरुजी! दो मास में न रहा जाये तो ?

उत्तर—मनुष्य को एक मास में एक बार।

शिष्य—गुरुजी! एक मास में न रहा जाये तो ?

उत्तर—मनुष्य को दो सप्ताह में एक बार।

शिष्य—गुरुजी! दो सप्ताह में न रहा जाय तो ?

उत्तर—मनुष्य को एक सप्ताह में एक बार।

शिष्य—गुरुजी! एक सप्ताह में न रहा जाय तो ?

उत्तर—कफन में दियासलाई से स्वयं को भस्म कर लेवे यही सबसे बढ़िया सामाधान है।

(ख) एक दिन ठाकुरप्रसाद सुनार ने दानापुर में स्वामीजी से कहा कि मुझ को योग की विधि बतलाइये। स्वामीजी ने उत्तर दिया कि एक विवाह और कर लो तुम्हारा योग पूरा हो जायेगा। ठाकुरप्रसाद ने कुछ समय पूर्व अपनी पहली पत्नी के होते हुए दूसरा विवाह किया था। स्वामीजी को इस बात का पहले से पता नहीं था।

भगवान् शंकर के द्वारा ब्रह्मचर्य के विषय में कहलाया गया है—

मरणं विन्दुपातेन जीवनं विन्दुधारणात्।

ब्रह्मचर्य का एक बूँद नष्ट होना ही मृत्यु है, ब्रह्मचर्य का पालन रक्षा करना ही जीवन है।

छायाचित्र पर आसक्त

प्राचीन समय में राजाओं का राज्य था, उस समय आधुनिक

विज्ञान विकसित नहीं था, जैसे सिनेमा, मोबाइल, कम्प्यूटर, इण्टरनेट भी नहीं था, उस समय रामलीला नाटक, हरिश्चन्द्र नाटक और महाराणा प्रताप नाटक से कार्य चलाया करते थे। यही मनोरञ्जन के साधन थे। एक बार राजा के पुत्र राजकुमार को रामलीला में सीता का पात्र बनाया गया, राजकुमार बारह-तेरह वर्ष का था, छोटी आयु में सिर के बाल बालिका जैसे रखा गया, साधन-प्रसाधन से चेहरा को चमकाया गया, सुन्दर-सी सचमुच सीता ही लग रही थी। रामलीला में सीता की भूमिका में फोटो खिंच लिया गया, वही फोटो किसी पुस्तक या सन्दूक में सुरक्षित रख दिया गया, सीता वाला फोटो पच्चीस या छब्बीस वर्ष के बाद राजकुमार के हाथ लग गया, वह अपने स्वरूप को भूल चुका था। सीता का फोटो देखकर राजकुमार उदास रहने लगा। रानी ने राजकुमार से उदास रहने का कारण पूछा, दो-तीन दिन तक राजकुमार ने भोजन नहीं किया। बहुत पूछने पर अपनी माँ रानी को फोटो दिखाया और कहा कि मेरे पास एक फोटो हाथ लगी है, मैं विवाह करूँगा तो इस लड़की से करूँगा नहीं तो मैं किसी और से नहीं करूँगा। रानी ने राजा से इस घटना की सूचना दी। राजा ने इस लड़की का फोटो देखकर फोटोग्राफर को बुलवाया और कहा कि यह फोटो मेरे राज्य में किस लड़की का है, इसका घर का पता करो, मेरा पुत्र राजकुमार इससे विवाह करना चाहता है। फोटोग्राफर ने कहा दो-तीन दिन के बाद मैं आप को बतलाऊँगा। दो-तीन दिन बाद बीतने पर फोटोग्राफर ने राजा से कहा, यह फोटो कभी राजकुमार ने बचपन में रामलीला में सीता का पार्ट-रोल अदा किया था सीता का पार्ट करते समय इसका फोटो खिंच लिया गया था, यह फोटो बचपन का राजकुमार का ही है। राजा ने राजकुमार से कहा यह फोटो बचपन का तुम्हारा ही है, तुमने रामलीला में नाटक किया था, यह फोटो किसी लड़की का नहीं है। यह फोटो तुम्हारा ही है। अपनी फोटो पर आसक्त देखकर राजकुमार को बहुत ग्लानि और पछतावा हुआ।

(२) आर्ष गुरुकुल होशंगाबाद मध्यप्रदेश की घटना

मैं ब्रह्मचारी नन्दकिशोर गुरुकुल में ही निवासस्थान था। एक दिन गुरुकुल के नलकूप पर स्नान कर रहा था, गर्मी का दिन था,

मेरी चढ़ती हुई जवानी थी। बसु ब्रह्मचारी से रुद्र ब्रह्मचारी की ओर अग्रसर था। स्नानागार में ऊँचे स्थान पर नल टूटी लगी हुई थी। भयंकर गर्मी के कारण कोपीन में स्नान करने लगा। बहुत आनन्द आ रहा था। उछल-कूद कर स्नान कर रहा था। अङ्ग-प्रत्यङ्ग को मल-मल कर स्नान कर रहा था। स्नान करते समय में अपने शरीर से खेलने लगा। मैं जब मस्तक आँख, नाक, कान, जाँघों को छूकर मल-मल कर आसक्त हो गया। इतने में ध्यान आया मैं क्या कर रहा हूँ। एक मन्त्र मुझे कण्ठाग्र था, रे मेरे मन के पाप दूर हट मैं तुझे नहीं चाहता। जंगलों वनों में चला जा। मेरा मन गौ आदि सेवा में लगा हुआ है। पास ही गोशाला था, गुरुकुल के गायों को खोलकर चराने लगा।

विमर्श—ब्रह्मचारी का सबसे प्रिय खेल गौ आदि की सेवा करना। संस्कार विधि और सत्यार्थप्रकाश में अङ्ग मर्दन करना ब्रह्मचारी के लिये निषेध है।

आजकल साधन प्रसाधन पाउडर आदि से बच्चे से बूढ़े-स्त्री-पुरुष सभी चेहरे शरीर को सुन्दर बनाने में लगे हैं। प्रतिस्पर्धा करते हैं कि मैं सबसे सुन्दर हूँ, चाहे खाने को पेट में कुछ भी न हो, दूध-घी खाने से चेहरे में चमक आती। ब्रह्मचर्य को दृढ़ता से पालन करने में चेहरे पर चमक आती है। लाखों पक्षी कबूतर-तोते को मारकर ओठों को रङ्ग कर बन-ठनकर बाजारों में चलती हुई नारियाँ मिल जायेगी। महाराष्ट्र, कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश, केरल और तमिलनाडू यहाँ के स्त्रियाँ ओठों को लाल कभी भी नहीं करती। बुराई से बचने का अच्छा उपाय है।

एक मेरे मित्र नई-नई शांदी करके पानीपत आ गये। पक्के ब्राह्मण वैदिकधर्मी थे। नाम पण्डित प्रियदत्त था। सादा जीवन ऊँच विचार अभाव ग्रस्त में भी मस्त थे। कोई भी साधु-संन्यासी और ब्रह्मचारी रात को बारह बजे इनके द्वार पर आये, उसको भरपेट खाना खिला-पिलाकर ही उनको आनन्द आता था, जाते समय पच्चीस-पच्चास रुपया देकर ही विदा करते थे। एक बार उनकी पत्नी ने ओंठ में लाली लगा ली, पण्डितजी को हल्का-सा क्रोध आ गया। वह भी बेचारी नई-नई दुनियाँ देख रही थी। पानीपत की महिलाओं को देखकर दुकान से ओंठ की लाली

खरीद कर ले आयी और लगा ली। स्त्री समाज के सत्सङ्ग में जा रही थी। पण्डितजी ने देख लिया और कहा कि देवीजी आप मुझको चाहती हो कि किसी और को? देवीजी ने कहा क्या बात है। मुझको खुश रखना चाहती हो तो ओंठ में लाली मत लगाओ। दूसरे को चाहती हो तो घर से निकलो। उस विचारी ने ओंठ में लाली लगाना सदा के लिये छोड़ दी। इसमें भी ब्रह्मचर्य का रहस्य छिपा है।

पञ्च विकार से मृत्यु

किसी मनस्वी संस्कृत के कवि ने ठीक ही कहा है—

पतङ्ग मातङ्ग कुरङ्ग भृङ्गमीना हताः पञ्चभिरेव पञ्च।

एकः प्रमादी स कथं न हन्यते यः सेवते पञ्चभिरेव पञ्च ॥

रूप

(३) पतङ्ग—रूप पर पतङ्गा का सर्वनाश के प्राश में अग्नित पतङ्गा गिरता है और मर जाता है। ऐसे ही नासमझ युवक सिनेमा, टेलीविजन, कम्प्यूटर के चलचित्रों को देखकर झूठे हीरो-हिरोइन पर फिदा होता है, और पतङ्गा की भाँति जान को गँवा देता है।

स्पर्श

(२) मातङ्ग (हाथी) स्पर्श से मारा जाता है जङ्गल में हाथी को पकड़ने के लिये गड्ढा खोद दिया जाता, गड्ढे के ऊपर बाँस की फटियाँ तैयार की जाती हैं, उस पर नकली हथिनी रेत- (बालू) की बना दी जाती है। मदमस्त हाथी हथिनी समझकर छलाङ्ग लगाता, गड्ढे में गिर जाता, इस प्रकार स्पर्श से हाथी मारा जाता है।

शब्द (ध्वनि)

(१) कुरङ्ग (हिरण) को गीत-संगीत में बहुत आनन्द आता है। कान की वशीभूत उसको शिकारी फँसा लेता है और पकड़ा जाता है।

गन्ध

(४) भृङ्ग (भ्रमरा) गन्ध व्यसन के कारण पुष्प में बन्द होकर मर जाता है। संस्कृत के महाविद्वान् ने भ्रमरा के विषय में

चित्र खींचा है

रात्रीर्गमिष्यति सुप्रभातं भविष्यति भास्वानुदिष्यति ।

हंसिष्यति पंकजश्री इत्थं विचिन्तयति द्विरेफे

कोशगते हा हन्त! हा हन्त! नलिनीं गजुज्जहारः ॥

एक भ्रमरा कमल के फूल में बैठकर गन्ध व्यसन में आसक्त है, गन्ध ले रहा, वह सोच रहा है कि रात्री बीतेगी प्रातःकाल होगा, सूर्य निकेगा, कल खिलेगा, मैं इस प्रकार विचार कर रहा है उधर से एक मदमस्त हाथी आया कमल की नाल तोड़कर मुँह में रख लिया इस प्रकार से भ्रमरा गन्ध से मारा जाता है ।

रस

(५) मीनाः—मछली को कहते हैं । मछली जिह्वा के वशीभूत मारी जाती है । मछली रस के व्यसन में काँटे सहित आटे की गोली को निगलने से मारी जाती है ।

जब जीव-प्राणी एक-एक विषय से शिकार होकर मारे जाते हैं तब मनुष्य के मस्तिष्क में सब एक साथ शरीर स्पर्श से रूप, कान, नाक और जिह्वा सब विद्यमान है तो उसकी क्या दशा होगी ।

हिन्दी के कवि ने भी ज्यों-के-त्यों इस श्लोक का अर्थ किया है—

(क) .

रूप व्यसन वश दीप शिखा पर कीट पतङ्ग का जल भुनना ।

स्पर्श व्यसन वश गिर गर्त में हाथी का न हिल सकना ।

शब्द व्यसन में फँसकर हिरना भूल गया कूद उछलना ।

गन्ध व्यसन वश हो बन्द कमल में भंवरे का भी मर मिटना ।

रस व्यसन वश मछली का भी फँस काँटे में तड़प मरना ॥

(ख)

रूप प्रलोभ पतंग जले, गज भोग फँसे टुक स्पर्श किये से,
शब्द प्रलोभ कुरंग बँधे, फँसता भ्रमरा प्रिय गन्ध पिये से ।
मीन प्रलोभ फँसे रस के, यह पाँच फँसे उर एक लिये से,
'नन्द' कहे नर क्यों न फँसे, मन पाँच विषय नित ध्यान दिये से ॥

पं० अमृतलाल शर्मा एवं श्री सूरदासजी

आर्य प्रतिनिधि सभा विदर्भ व मध्यप्रदेश के अन्तर्गत गुरुकुल होशंगाबाद नर्मदा के किनारे स्थित है। इस आर्य गुरुकुल के पुनः उद्धारक आचार्य स्वामी भूमानन्दजी थे, इनके काल में गुरुकुल सुचारु रूप से चलने लगा, ठीक चला किन्हीं कारणों से स्वामीजी गुरुकुल छोड़कर सन् १९७८ में हरिद्वार की ओर चले गये। सभा के प्रधाना माता कौशल्या देवी, मन्त्री रमेशचन्द्रजी श्रीवास्तव ने पुनः चलाने का प्रयास किया। इन दोनों ने गुरुकुल होशंगाबाद को चलाने के लिए खण्डवा निवासी पं० अमृतलाल शर्मा को व्यवस्थापक नियुक्त किया। पुनः गुरुकुल चलने लगा। विपद् का मारा होशंगाबाद निवासी सूरदास भोजन करने के लिये नगर से प्रतिदिन गुरुकुल में आ जाते थे, एक दिन स्वामी सेवानन्दजी ने कहा जब तुम यहीं भोजन करते हो तो गुरुकुल में ही रहो, थोड़ा-बहुत गुरुकुल की सेवा करते रहना। सूरदासजी गुरुकुल में रहने लगे। मुझ ब्र० नन्दकिशोर का पक्का दोस्त बन गया। मैं उसके साथ कभी बाजार या नौका द्वारा नर्मदा पार घूमकर आ जाता था, सूरदास छोड़कर गुरुकुल में कोई दूसरा व्यक्ति नहीं था। जिसके साथ मैं विचार-विमर्श कर सकूँ। एक समय ऐसा आया पं० अमृतलालजी मुझसे कहा कि सूरदास आप का मित्र है आप सूरदास को गुरुकुल परिसर से बाहर जाने से रोको, मैंने शर्माजी से कहा, अन्धा है लाचार है। दो-तीन दिन तक टोकते रहे। मैं समझ नहीं पाया। पुनः एक दिन शर्माजी ने कहा मैं गृहस्थी हूँ आप नहीं जानते। सूरदास को बाहर जाने से रोको, गुरुकुल की बदनामी होगी। सूरदास झुगी-झोपड़ी में जाते हैं, रेलवे फाटक पर एक लङ्गड़ी स्त्री रहती है २०-२५ बकरी उसने पाल रखी है, उसके यहाँ चाय पीते हैं। मैंने कहा—सूरदासजी चाय पीते हैं, फिर क्या हुआ, चाय पीने दीजिये। फिर शर्माजी झुझलाकर कहा कि संसर्ग-दोष हो जायेंगे, स्त्री को सूरदास धीरे-धीरे स्पर्श करने लग

जायेंगे, सूरदासजी अन्धे हैं तो क्या हुआ, आँख नहीं है बाकी नव इन्द्रियाँ तो हैं। शर्माजी के कहने से मेरी आँखें खुल गयी। दूसरे दिन मैंने सूरदासजी को जोश में आकर कहा, ओ! सूरदासजी आज से तुम झुगगी-झोपड़ी में नहीं जाओगे, यदि जाते हो तो गुरुकुल से तुम्हारी छुट्टी हो जायेगी। तब से सूरदासजी ने गुरुकुल छोड़कर बाहर जाना छोड़ दिया। महर्षि मनु ने ठीक ही कहा है—

श्रुत्वा स्पृष्ट्वा च दृष्ट्वा च भुक्त्वा घ्रात्वा च यो नरः।

न हृष्यति ग्लायति वा स विज्ञेयो जितेन्द्रियः॥

—मनु० अ० २।९८

जो स्तुति सुनकर हर्ष और निन्दा सुनकर शोक अच्छा स्पर्श करके सुख और दुष्ट स्पर्श से दुःख, सुन्दर रूप देख के प्रसन्न और दुष्ट रूप देख के अप्रसन्न। उत्तम भोजन करके आनन्दित और निकृष्ट भोजन करके दुःखित। सुगन्ध में रुचि और दुर्गन्ध में अरुचि नहीं करता उसको जितेन्द्रिय कहते हैं।

ब्रह्मचर्य का ढोंग

ब्रह्मचारी का ढोंग पूर्व और पश्चिम नामक स्वरचित पुस्तक में लेखक ने लिखा है कि ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने वाला ब्रह्मचारी घर पर आया हुआ था, घर में उसकी सगी बहन बीमार से बहुत पीड़ित थी, वह तड़प रही थी वह सोचता है कि बहन को स्पर्श करूँगा तो मेरा व्रत भंग होता है, बहन को अस्पताल में न ले जाकर मृत्यु को समर्पित करता है यह उसका ब्रह्मचर्य का ढोंग है।

कवित और गीत

बाल ब्रह्मचारी हनुमन्त कूद लंक बीच,
 मान मर्दि रावण के लंक को जलाया था।
 महाराणा ब्रह्मचारी सुभट प्रतापसिंह,
 सेना मार मुगलों की बल दिखलाया था।
 योगी ब्रह्मचारी कृष्ण जीत महाभारत को,
 दुराचारी शासन को धूल में मिलाया था।
 'नन्द' कहे ऋषि दयानन्द ब्रह्मचारी ध्रुव,
 खण्डन पाखण्ड कर वेद दरसाया था ॥ १ ॥

मानवोद्धारक दयानन्द—

पाला ब्रह्मचर्य व्रत वीर हनुमान् ने था,
 अपने आराध्यदेव राम के रिझाने को।
 सुनते हैं पाला ब्रह्मचर्य परशुराम ने था,
 आततायी क्षत्रिय समाज के नसाने को।
 पाला ब्रह्मचर्य भीष्म पितामह ने 'प्रकाश',
 पूज्य पिता शान्तनु को सुखिया बनाने को।
 किन्तु पाला ब्रह्मचर्य देव दयानन्द ने था,
 कोटि-कोटि मानवों के संकट मिटाने को ॥ २ ॥

गीत

ब्रह्मचर्य नष्ट कर डाला, क्यों हुआ देश मतवाला।
 पवन, पुत्र हनुमान् बली ने कैसा बल दिखलाया था।
 ब्रह्मचर्य के प्रताप से लंका को जाय जलाया था,
 रावण दल में अंगद का नहीं पैर टला था टाला ॥ १ ॥
 'शक्ति' खाय उठ लक्ष्मण जी कैसा युद्ध मचाया था,
 मेघनाद से शूरवीर को पल में मार गिराया था,
 रामायण को पढ़कर देखो है इतिहास निराला ॥ २ ॥

परशुराम के कुठार का भई जग मशहूर फसाना है,
 बाल ब्रह्मचारी 'भीष्म' को जाने सभी जमाना है,
 काँपे था जग इनके डर से पड़ न जाय कहीं पाला ॥ ३ ॥
 चालीस मन के पत्थर को रख छाती पर तुड़वाता था,
 लोहे की जंजीरों के वह टुकड़े मित्र उड़ाता था,
 राममूर्ति मोटर रोके था, है प्रत्यक्ष हवाला ॥ ४ ॥

डेढ़ अरब के मुकाबले में इकला ही वीर दहाड़ा था,
 जिसने आकर किया सामना पल में उसे पछाड़ा था,
 जिसका नाम सभी दुनियाँ में 'दयानन्द ऋषि' आला ॥ ५ ॥
 ब्रह्मचर्य को धारो भाइयो यह तो दवा अनूठी है,
 मुर्दे को जिन्दा करने की, यही संजीवन बूटी है,
 "इन्द्र" कहे तुम कमजोरी को दे दो देश निकाला ॥ ६ ॥

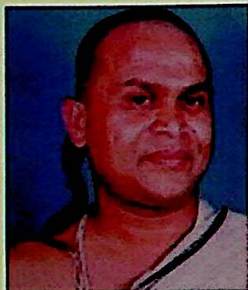
जब तक एक भी ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द का शिष्य विद्यमान हैं
 तब तक निराश और हताश होने की आवश्यकता नहीं
 द्वीपदीपान्तर और देश-देशान्तर में आर्यसमाज और
 महर्षि दयानन्द का बोलबाला होकर रहेगा ॥ ७ ॥

जितने मेरे शरीर पर रोम हैं उतनी बार जन्म लूँ और
 सब जन्मों में आजीवन ब्रह्मचारी रहकर
 वैदिक धर्म का प्रचार करूँ तो भी
 महर्षि दयानन्द के ऋण से उऋण नहीं हो सकता ॥ ८ ॥

—स्वामी ओमानन्द सरस्वती
 गुरुकुल महाविद्यालय झज्जर (हरि०)



परिचय



आचार्य ब्र० श्री नन्दकिशोर विद्यावाचस्पति, एम०ए०, शोधार्थी मनोवृत्ति के स्वामी हैं। आपने दुर्लभ साहित्य खोजकर संगृहीत किया हुआ है, जो समय पर जिज्ञासु लेखकों, प्रकाशकों को आप उपलब्ध करवाते रहते हैं। गौरव ग्रन्थमाला इसी शोध का परिणाम है। एक-एक विषय पर आपने सामग्री एकत्रित कर पाठकों के हितार्थ प्रकाशित की है।

आर्यसमाज के सप्तखण्डीय इतिहास के लिए श्री घूडमल आर्य साहित्य समिति द्वारा सम्मानित डॉ० सत्यकेतुजी विद्यालंकार को आपने बहुत-सी सामग्री उपलब्ध करवाई।

ऋषि दयानन्द द्वारा प्रचारित व प्रसारित वेदोक्त विचारधारा के जन-जन तक पहुंचाने हेतु आपका अहर्निश चिन्तन चलता रहता है। आपने कई गुरुकुलों की स्थापना में महत्वपूर्ण योगदान किया है और अनेक की सहायतार्थ प्रेरित करते रहते हैं। साहित्य प्रकाशन में भी आप सक्रिय हैं और आपका प्रयास है कि आर्यसमाज का साहित्य विधिवत् खण्डों में प्रकाशित हो, जिससे इसका स्वरूप व महत्व तथा उपयोगिता स्पष्ट हो सके।

नेपाल में आर्यसमाज के कार्य हेतु आपके प्रयास अनुकरणीय व श्लाघनीय हैं। हिन्दी के साथ नेपाली व मराठी भाषा के साहित्य प्रकाशन में आपका उल्लेखनीय योगदान है। बालकों, युवकों को आगे बढ़ाने व प्रोत्साहन देने में आप हमेशा तत्पर रहते हैं। सम्पूर्ण आर्यजगत् में अपनी अद्भुत क्षमताओं, लगन व कार्यशैली के कारण आप सम्मान पाते हैं।

आर्यसमाज के कर्मठ कार्यकर्ता, वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार एवं वैदिक साहित्य सेवा के उपलक्ष्य में आप कई पुरस्कारों एवं सम्मानों से सम्मानित हो चुके हैं, जिनमें—१. श्री ब्रह्मचारी अखिलानन्द आर्य भिक्षु पुरस्कार (आर्य वानप्रस्थाश्रम, ज्वालापुर, हरिद्वार)। २. आर्य विभूषण पुरस्कार (राव हरिश्चन्द्र आर्य चैरिटेबल ट्रस्ट, नागपुर)। ३. दिल्ली संस्कृत अकादमी संस्कृत सेवा सम्मान (नई दिल्ली)। ४. चौधरी मित्रसेन स्मृति पुरस्कार ससम्मान (गुरुकुल आमसेना, उड़ीसा)। ५. परोपकारिणी सभा प्रशस्ति पत्र (अजमेर)। ६. पं० गुरुदत्त विद्यार्थी निर्वाण शताब्दी समारोह (आर्य प्रतिनिधि सभा, हरियाणा)। ६. स्वर्गीय पं० ऋषि तिवारी स्मृति सम्मान (मानव सेवा प्रतिष्ठान, हालैण्ड)। ७. सत्यव्रत अग्निवेश पुरस्कार (विक्रम प्रकाशन, अमेरिका इत्यादि)।